श्याम नंदन प्रसाद एवं अन्य

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य

13 अगस्त, 1993

[ए.एम. अहमदी एवं मदन मोहन पुंछी, न्यायमूर्तिगण]

भूमि अधिग्रहण अधिनियम—धारा 4 (जैसा कि बिहार में लागू है)—धाराएँ 3(ग), 5-क, 6, 35, 38—सार्वजनिक प्रयोजन—उसका क्षेत्र—समाहर्ता के दायित्व तथा उसके कार्यों का स्वरूप—अधिनियम की धारा 55 का क्षेत्र।

कंपनियों के लिए भूमि का अधिग्रहण—अधिनियम की धाराएँ 39 एवं 40—उनका क्षेत्र—निजी कंपनी बनाम सरकारी कंपनी—विशिष्ट विशेषताएँ— समिति की स्थिति (दर्जा) की प्रासंगिकता।

अपीलकर्ता बिहार वित्त सेवा गृह निर्माण सहकारी समिति के सदस्य हैं, जिसे बिहार वित्त सेवा के ऐसे सदस्यों द्वारा गठित किया गया था जो भूमिहीन थे और जिनके पास पटना शहर में कोई आवासीय भूखंड या मकान नहीं था। तथापि, यह कहा गया है कि समिति की सदस्यता ऐसे सभी व्यक्तियों के लिए खुली थी जो इसी प्रकार भूमिहीन थे। वर्ष 1973 में समिति ने 59.95 एकड़ भूमि के अधिग्रहण का प्रस्ताव रखा, जिसके उपरांत राज्य सरकार ने भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत अधिसूचना जारी की और धारा 5-क के अंतर्गत आपत्तियाँ आमंत्रित कीं। तत्पश्चात, विधिक औपचारिकताओं के पालन के बाद, अधिनियम की धारा 6 के अंतर्गत अधिसूचना जारी की गई, जो कुल भूमि के संबंध में थी, सिवाय 5 एकड़ भूमि के, जिसे संभावित रूप से विस्थापित होने वाले व्यक्तियों को आवंटन हेतु पृथक रखा गया।

पटना स्थित उच्च न्यायालय ने भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 6 के अंतर्गत की गई घोषणा को निरस्त कर दिया और यह विचार करने हेतु मामला पुनः सरकार को भेज दिया कि क्या विवादित कार्रवाई अधिनियम की धारा 5-क का उल्लंघन करती है। इसके विरुद्ध यह मामला अपील में इस न्यायालय के समक्ष आया।

अपील स्वीकार करते हुए तथा मामले को पुनः उच्च न्यायालय को वापस भेजते हुए, इस न्यायालय ने—

अभिनिर्धारित : अधिनियम की धारा 5-ए का अनुपालन अनिवार्य है, तथा आपत्तिकर्ता को सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाना आवश्यक है। [539-ई]

श्री मंदिर सीता रामजी बनाम दिल्ली के उपराज्यपाल एवं अन्य, **(1975)4 एससीसी 298** तथा *श्री फरीद अहमद अब्दुल समद एवं अन्य बनाम अहमदाबाद,* नगर निगम एवं अन्य, **[1976]3 एससीसी 719** - का संदर्भ लिया गया।

धारा 5-ए के उपबंध एक न्यायसंगत एवं स्वस्थ सिद्धांत को प्रतिपादित करते हैं कि जिस व्यक्ति की संपत्ति का अधिग्रहण किया जा रहा है या किया जाना प्रस्तावित है, उसे संबंधित प्राधिकारियों को यह समझाने का अवसर मिलना चाहिए कि उसकी संपत्ति को अधिग्रहण से अछूता रखा जाए—यह अधिकार पूर्णतः निरपेक्ष है, जब तक कि सक्षम सरकार विधि के अंतर्गत इसकी अनुप्रयोगिता को अपवर्जित (निरस्त) करने का निर्णय न ले। [539-एफ]

धारा 41 की भाषा से यह स्पष्ट है कि जब तक प्रस्तावित अधिग्रहण धारा 40 की उपधाराओं (ए), (एए) तथा (बी) में उल्लिखित तीन प्रकारों में से किसी एक के अंतर्गत न आता हो और यह न पाया जाए कि वह इन्हीं उद्देश्यों में से किसी एक के लिए आवश्यक है, तब तक न तो उस नामित अधिकारी, जिसे जाँच सौंपी गई है, को किसी कंपनी के पक्ष में निर्णय देने का अधिकार है और न ही सरकार से यह अपेक्षा की जा सकती है कि वह ऐसी संतुष्टि दर्ज किए बिना अपनी स्वीकृति प्रदान करे। इसके उपरांत, अधिनियम की धारा 42 के अंतर्गत यह आवश्यक है कि किया गया समझौता, उसके निष्पादन के यथाशीघ्र पश्चात, राजपत्र में प्रकाशित किया जाए और तत्पश्चात उसे ऐसा ही प्रभाव प्राप्त होता है मानो वह स्वयं अधिनियम का ही भाग हो। सरकार द्वारा प्रतिवेदन पर विचार करने और उसे स्वीकार करने, जो कि स्वीकृति द्वारा अभिव्यक्त होता है, में जनसाधारण को उस कार्य के उपयोग का अधिकार एक व्यापक तत्व के रूप में निहित रहता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि विचार-विमर्श एवं निर्णय को संचालित करने वाला प्रधान उद्देश्य सार्वजनिक उपयोगिता है। [542-सी-ई]

धारा 44-बी एक निजी कंपनी और सरकारी कंपनी के बीच भेद करती है। तथापि, चूँकि यह समिति न तो सरकारी कंपनी है और न ही निजी कंपनी, इसलिए निजी कंपनी

के लिए अधिग्रहण को किसी एक उद्देश्य तक सीमित करने संबंधी धारा 44-ख की बाधा यहाँ लागू नहीं होती। ऐसी स्थिति में, लोक कंपनी के रूप में समिति को यह संतुष्ट करना होगा कि उसे भूमि की आवश्यकता धारा 40 की उपधाराओं (ए), (एए) तथा (बी) में उल्लिखित किसी उद्देश्य के लिए है, तभी वह सक्षम सरकार की सहमति प्राप्त कर सकती है। हालाँकि, सरकार के समक्ष अधिग्रहण का अनुरोध करने से पूर्व, कंपनी को नियम 4 के प्रावधानों का पालन करना आवश्यक है, जबकि नियम 3 के अंतर्गत भूमि अधिग्रहण समिति का गठन किया जाता है। नियम 4 अनिवार्य है और उसका अनुपालन किया जाना आवश्यक है।

[542-एफ, 543- डी, एफ; 545-एच]

गुजरात राज्य और अन्य बनाम पटेल चतुरभाई नारसीभाई एवं अन्य, **[1975] 1 एससी सी 583** ; गुजरात राज्य और अन्य बनाम अमजालाल हैदरभाई *एवं* अन्य, **[1976] 3 एससीसी 495 (499)** और सामान्य सरकारी सेवक सहकारी आवास समिति लिमिटेड गृह निर्माण सहकारी समिति लिमिटेड और अन्य बनाम श्री वहाब उद्दीन *एवं* अन्य, **[1981] 2 एससीसी 352**, पर **अवलंबन किया गया।**

कंपनी के लिए भूमि का अर्जन वास्तव में एक सार्वजनिक उद्देश्य के लिए ही है क्योंकि धारा 40 में उल्लिखित वे सभी गतिविधियां सार्वजनिक उद्देश्य की पूर्ति करती हैं। कंपनी के लिए अर्जन और इसके उद्देश्य की जांच अधिनियम की धारा 5 ए या धारा 40 के तहत, अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना के बाद ही, अनिवार्य रूप से की जा सकती है। [548-एफ]

बाबू बरक्या ठाकुर बनाम बॉम्बे राज्य(अब महाराष्ट्र) एवं अन्य, **एआईआर (1960) एससी 1203, का संदर्भ दिया गया।**

अतः अपीलकर्ताओं की ओर से प्रस्तुत यह दलील कि जब उनकी समिति को न तो निजी और न ही सरकारी कंपनी माना जा सकता था, तो वह कोई कंपनी ही नहीं थी ताकि वह अधिनियम के अध्याय VII का अनुपालन करने के लिए बाध्य रहे, निराधार है। समिति एक कंपनी के रूप में अपने अभिप्रेत उद्देश्य को बढ़ावा देने के लिए अधिनियम की धारा 6 से 37 तक की सहायता लेने से पहले धारा 40 की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बाध्य है। [549-बी]

उच्च न्यायालय को अधिनियम की धारा 6 के तहत जारी अधिसूचना को पूरी तरह से रद्द नहीं करना चाहिए था और उसे अपने सामने हर विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाकर्ता के मामले में अलग-अलग न्याय करना चाहिए था, हर मामले में काम कर रही समानता और अपने विवेक के नियमन को ध्यान में रखते हुए, साथ ही उन कई दूसरे कारकों को भी ध्यान में रखना चाहिए था जो उच्च न्यायालय को राहत देने, न देने या उसमें बदलाव करने के लिए प्रभावित करते हैं, भले ही प्रक्रिया में गैर-कानूनी बातें साफ दिख रही हों। [549-डी]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: 1993 की दीवानी अपील संख्या 3902-26

पटना उच्च न्यायालय के दीवानी रिट क्षेत्राधिकार संख्या 2755/88, 953, 957, 2963, 1618, 93, 924, 2780, 904, 940, 983, 998, 1040, 1041, 1042, 1108, 1179, 2365, 875, 877, 1688/84, 2962, 6000, 2849 एवं 5904/1983 में पारित

उपस्थित पक्षों की ओर से श्री पी.पी. राव, एस.एस. रे, आर.के. जैन, एम.एल. वर्मा, आर. शंकर प्रसाद, ए.के. श्रीवास्तव, राकेश के. खन्ना, आर.पी. सिंह, मनोज गोयल, सुश्री आभा आर. शर्मा, आशीष वर्मा, ए. शरण, के.एल. तनेजा, एजाज मकबूल, बी.के. मिश्रा, डी.पी. मुखर्जी, बी.बी. सिंह एवं उमा दत्ता।

न्यायालय का निर्णय निम्नलिखित द्वारा सुनाया गया:

पूँछी, न्यायमूर्ति - इन याचिकाओं के समूह में विशेष अनुमति दी गई ।

ये अपीलें पटना उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा वर्ष 1983 और 1984 (एक 1988 की याचिका को छोड़कर) में दायर विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाओं के एक समूह में पारित दिनांक 22.2.90 के साझा निर्णय और आदेश के विरुद्ध निर्देशित हैं, जिसके द्वारा भूमि अधिग्रहण अधिनियम ('अधिनियम') की धारा 6 के तहत दिनांक 16/18.3.83 की घोषणा को अभिखंडित कर दिया गया था और मामले को दो शीर्षों के तहत आगे की कार्यवाही के लिए राज्य सरकार को वापस भेज दिया गया था।

यहाँ के अपीलकर्ता बिहार वित्त सेवा गृह निर्माण सहकारी समिति के कुछ सदस्य हैं, जो वर्ष 1973 में 'बिहार और उड़ीसा सहकारी समिति अधिनियम' के तहत पंजीकृत एक समिति है। अपीलकर्ताओं का कहना है कि इसके सदस्यों की संख्या लगभग 400 है। बताया गया है कि इस समिति का गठन बिहार वित्त सेवा के उन सदस्यों द्वारा किया गया था जो भूमिहीन थे और पटना शहर में जिनका अपना कोई आवासीय भूखंड या घर

नहीं था। कथित तौर पर, इसकी सदस्यता केवल बिहार वित्त सेवा के सदस्यों तक ही सीमित नहीं थी, बल्कि उन सभी के लिए खुली थी जो इसी तरह भूमिहीन थे। समिति का आयोजन और गठन राज्य सरकार से अधिग्रहण के माध्यम से भूमि प्राप्त करने के लिए किया गया था ताकि समिति अपने सदस्यों को भूखंड दे सके या घर बनाकर उन्हें दे सके। इस उद्देश्य के लिए, वर्ष 1973 में ही इसने राज्य सरकार के समक्ष पटना शहर के एक हिस्से, कुम्हरार गाँव की राजस्व संपदा में 59.95 एकड़ भूमि अधिग्रहण करने का प्रस्ताव रखा। कुछ कदमों के बाद, राज्य सरकार ने 21.4.81 को अधिनियम की धारा 4 के तहत एक अधिसूचना जारी की, जिसमें इच्छुक व्यक्तियों को उक्त अधिनियम की धारा 5ए के तहत अपनी आपत्तियां दर्ज करने के लिए आमंत्रित किया गया। इच्छुक व्यक्तियों से प्राप्त आपत्तियों पर अपर समाहर्ता द्वारा निपटारा किए जाने और प्रस्तुत प्रतिवेदन के आधार पर, 5 एकड़ भूमि को छोड़कर जिसे अधिग्रहण से प्रभावित होने वाले व्यक्तियों के आवंटन के लिए अलग रखा गया था उपर्युक्त सीमा तक भूमि अधिग्रहण के लिए अधिनियम की धारा 6 के तहत घोषणा की गई। विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाएं दायर होने पर, उच्च न्यायालय ने धारा 6 के तहत घोषणा को अभिखंडित कर दिया और मामले को दो आधारों पर पुनर्विचार के लिए राज्य सरकार को वापस भेज दिया, जिनमें से एक आधार धारा 5-ए के अनिवार्य प्रावधानों का उल्लंघन था। इसी प्रकार यह मामला अपील में हमारे समक्ष आया है।

इस स्तर पर, प्रमुखता से यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि धारा 4 और 6 के तहत दोनों अधिसूचनाएं कानून की उस स्थिति में जारी की गई थीं जो भूमि अधिग्रहण (संशोधन) अधिनियम, 1984 (अधिनियम संख्या 68/1984) के पारित होने से पूर्व विद्यमान थी। इस विषय पर यह कानून विभिन्न बिहार विधायी अधिनियमों द्वारा प्रतिस्थापित और संशोधित किया गया था। इस मामले का निर्णय करने के लिए अब से हम बिहार राज्य में लागू कानून का ही उल्लेख करेंगे।

बिहार में लागू भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 निम्नानुसार प्रावधान करती है:

> " उपधारा (1):- जब कभी समुचित सरकार या समाहर्ता को यह प्रतीत होता है कि किसी क्षेत्र की भूमि किसी सार्वजनिक प्रयोजन के लिए आवश्यक है या उसके आवश्यक होने की संभावना है, तो उस आशय की एक अधिसूचना

समाहर्ता के कार्यालय, अनुमंडल अधिकारी के कार्यालय, सबसे छोटी राजस्व प्रशासनिक इकाई के कार्यालय और यदि बिहार पंचायत राज अधिनियम, 1947 (1948 का बिहार अधिनियम VII) के तहत कोई ग्राम पंचायत गठित है, तो उसके कार्यालय में, तथा उस गाँव के किसी विशिष्ट स्थान पर, जहाँ भूमि स्थित है, प्रकाशित की जाएगी; और समाहर्ता उक्त अधिसूचना की प्रतियाँ उन सभी व्यक्तियों पर तामील करवाएगा जिनके बारे में यह ज्ञात है या विश्वास है कि वे उस भूमि में रुचि रखते हैं।"

व्याख्या:- इस धारा के प्रयोजन के लिए अभिव्यक्ति "सबसे छोटी राजस्व प्रशासनिक इकाई" का अर्थ अनुमंडल से ठीक नीचे की सबसे छोटी प्रशासनिक इकाई होगी, चाहे वह वर्तमान में एन.ई.एस. ब्लॉक, सर्कल, अंचल या किसी अन्य नाम से जानी जाती हो।"

"उपधारा (2):- तदुपरान्त, ऐसी सरकार या समाहर्ता द्वारा इस संबंध में सामान्य या विशेष रूप से अधिकृत किसी भी अधिकारी के लिए, और उसके सेवकों तथा श्रमिकों के लिए यह वैध होगा कि वे उस क्षेत्र की किसी भी भूमि में प्रवेश करें और उसका सर्वेक्षण करें तथा माप लें......."

धारा 3 के खंड (ग) के आधार पर, 'समाहर्ता' अभिव्यक्ति का अर्थ जिले का समाहर्ता है और इसमें उपायुक्त , अपर समाहर्ता, अपर उपायुक्त तथा धारा 4, 5-क, 6, 35 और 38 के तहत कार्यों को छोड़कर, इस अधिनियम के अंतर्गत समाहर्ता के कार्यों का निर्वहन करने के लिए समुचित सरकार द्वारा विशेष रूप से नियुक्त कोई भी अधिकारी शामिल है।

धारा 3 के खंड (छ) के आधार पर, "सार्वजनिक प्रयोजन" अभिव्यक्ति में निम्नलिखित के लिए या उससे संबंधित प्रावधान शामिल हैं:-

(i) किसी भी प्रकार के स्वच्छता सुधार, जिसमें भूमि सुधार शामिल है; और

(ii) ग्राम-स्थलों नगरों का विन्यास, या मौजूदा ग्राम-स्थलों या नगरों का विस्तार, नियोजित विकास या सुधार।

बिहार में लागू धारा 5-ए की उपधारा (1) यह प्रावधान करती है कि कोई भी व्यक्ति, जो ऐसी किसी भूमि में रुचि रखता है जिसे धारा 4 की उपधारा (1) के तहत

किसी सार्वजनिक प्रयोजन या किसी कंपनी के लिए आवश्यक या आवश्यक होने की संभावना के रूप में अधिसूचित किया गया है, उस गाँव के किसी विशिष्ट स्थान पर उक्त उपधारा में संदर्भित अधिसूचना के प्रकाशन की तारीख से या उस पर उसकी प्रति की तामील की तारीख से, जो भी बाद में हो, तीस दिनों के भीतर, यथास्थिति, उस भूमि या उस क्षेत्र की किसी भी भूमि के अधिग्रहण पर आपत्ति कर सकता है।

बिहार में प्रतिस्थापित उपधारा (2) यह प्रावधान करती है कि उपधारा (1) के तहत प्रत्येक आपत्ति समाहर्ता को लिखित रूप में दी जाएगी, जो आपत्तिकर्ता को स्वयं या अधिवक्ता के माध्यम से सुनवाई का अवसर देगा और ऐसी सभी आपत्तियों को सुनने और ऐसी कोई अन्य जांच, यदि कोई हो, जिसे वह आवश्यक समझे, करने के बाद आपत्ति पर निर्णय लेगा: परंतु यह कि समुचित सरकार, या तो *स्वतः संज्ञान* लेकर या भूमि में रुचि रखने वाले किसी व्यक्ति के आवेदन पर, समाहर्ता द्वारा आयोजित कार्यवाही का अभिलेख मंगवा सकती है और ऐसा आदेश पारित कर सकती है जैसा वह उचित समझे; और आगे यह कि समुचित सरकार का आदेश तथा ऐसे आदेश के अधीन रहते हुए, खंड (i) के तहत समाहर्ता का निर्णय अंतिम होगा।

धारा 6 से पूर्व के चरण में, जहाँ भूमि स्थित है उन विभिन्न स्थानों पर प्रकाशन की पद्धति के अतिरिक्त, अधिसूचना की प्रति की व्यक्तिगत तामील उस हितबद्ध व्यक्ति पर किया जाना प्रमुख रूप से आवश्यक है ताकि वह समाहर्ता के समक्ष लिखित रूप में आपत्तियां प्रस्तुत कर सके; और आपत्तियां किए जाने पर, समाहर्ता का यह दायित्व है कि वह आपत्तिकर्ता को स्वयं या अधिवक्ता के माध्यम से सुनवाई का अवसर प्रदान करे। समाहर्ता ऐसी सभी व्यक्तिगत आपत्तियों को सुनने, आवश्यकतानुसार आगे की जांच करने और फिर उस पर उचित निर्णय लेकर सरकार को सूचित करने के लिए बाध्य है। समाहर्ता का निर्णय अंतिम माना जाता है जब तक कि समुचित सरकार उसमें हस्तक्षेप करने का विकल्प नहीं चुनती है और *स्वतः संज्ञान* लेकर या भूमि में रुचि रखने वाले किसी व्यक्ति के आवेदन पर उसमें बदलाव नहीं करती है। ये आवश्यकताएं स्पष्ट रूप से इस सकारात्मक निष्कर्ष की ओर ले जाती हैं कि समाहर्ता के समक्ष होने वाली कार्यवाही सार्वजनिक और व्यक्तिगत जांच का एक मिश्रण है। जो व्यक्ति भूमि में रुचि रखता है, या जिसके बारे में रुचि रखने की जानकारी है, उसे व्यक्तिगत रूप से अधिसूचना तामील की जानी चाहिए, जिससे उसे अधिग्रहण पर आपत्ति करने का अवसर मिले और उसे ऐसे

अधिकार के प्रति जागरूक किया जा सके। आपत्ति का लिखित रूप में होना इस तथ्य का सूचक है कि आपत्ति की जांच उसके व्यक्तिगत कारण के साथ-साथ सार्वजनिक कारण पर भी केंद्रित होनी चाहिए। जांच के समय, जिसके लिए पूर्व सूचना अनिवार्य होगी, आपत्तिकर्ता को स्वयं या अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित होने और साक्ष्य एवं तर्क द्वारा अपनी आपत्ति की पुष्टि करने का अधिकार है। और अंततः, चूंकि समाहर्ता का निर्णय अंतिम हो सकता है जब तक कि सरकार द्वारा *स्वतः संज्ञान* या आवेदन पर हस्तक्षेप न किया जाए, समाहर्ता का निर्णय एक अर्ध-न्यायिक प्राधिकारी का निर्णय है, जो अर्ध-न्यायिक पद्धतियों द्वारा लिया गया है।

यह निर्विवाद है कि धारा 5-क के प्रावधानों का अनुपालन अनिवार्य है। इस संबंध में देखें, *श्री मंदिर सीता रामजी बनाम दिल्ली के उपराज्यपाल और अन्य,* [1975] 4 एससीसी 298 और *श्री फरीद अहमद अब्दुल समद और अन्य बनाम अहमदाबाद शहर नगर निगम और अन्य,* [1976] 3 एससीसी 719। आपत्तिकर्ता को सुनवाई का अवसर प्रदान करना अनिवार्य है। यह प्रावधान एक न्यायसंगत और हितकारी सिद्धांत को समाहित करता है कि जिस व्यक्ति की संपत्ति का अधिग्रहण किया जा रहा है, या किए जाने का इरादा है, उसे संबंधित अधिकारियों को यह समझाने का अवसर मिलना चाहिए कि उसकी संपत्ति का अधिग्रहण न किया जाए। हालाँकि, यह अधिकार पूर्ण नहीं है यदि समुचित सरकार, अपने विवेक से, अधिनियम की धारा 17 के आपातकालीन प्रावधानों को लागू करके इसकी प्रयोज्यता को समाप्त करने का विकल्प चुनती है। लेकिन एक बार जब धारा 5-क को लागू रखा जाता है, तो इसके प्रावधानों को हल्के में या लापरवाही से लेने का कोई कारण नहीं रह जाता।

उच्च न्यायालय द्वारा मामले को रिमांड भेजने का दूसरा आधार अधिनियम की धारा 40 और भूमि अधिग्रहण (कंपनियां) नियम, 1963 (जिसे इसके बाद 'नियम' कहा गया है) के नियम 4 का कथित उल्लंघन था, जो अधिनियम की धारा 55 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए केंद्र सरकार द्वारा बनाए गए थे। मामले के इस पहलू को समझने के लिए यह स्पष्ट करना होगा कि उस सहकारी समिति की स्थिति क्या है जिसके अपीलकर्ता सदस्य हैं। धारा 3 की उपधारा (ङ) के प्रभाव से सहकारी समिति (जो अब एक उत्तरदाता के रूप में पक्षकार है, लेकिन पंजीकरण की प्रक्रियात्मक आपत्ति के कारण उसे अपीलकर्ता के रूप में स्थानांतरित करने के आवेदन पर सुनवाई नहीं हुई है)

एक कंपनी है। यह प्रावधान करता है कि "कंपनी" अभिव्यक्ति का अर्थ भारतीय कंपनी अधिनियम, 1882 या अंग्रेजी कंपनी अधिनियम, 1862 से 1890 के तहत पंजीकृत, या यूनाइटेड किंगडम की संसद के किसी अधिनियम द्वारा या किसी भारतीय कानून द्वारा या रॉयल चार्टर या लेटर्स पेटेंट द्वारा निगमित कंपनी है, और इसमें समिति पंजीकरण अधिनियम 1860 के तहत पंजीकृत समिति, तथा सहकारी समिति अधिनियम, 1912 या किसी भी राज्य में लागू सहकारी समितियों से संबंधित किसी अन्य कानून के अर्थ में एक पंजीकृत समिति शामिल है। अधिनियम में दी गई यह परिभाषा तब तक प्रभावी है जब तक कि विषय या संदर्भ में इसके विपरीत कुछ न पाया जाए। कंपनियों के लिए भूमि अधिग्रहण हेतु अधिनियम में भाग VII के रूप में एक अलग अध्याय प्रदान किया गया है। धारा 39 यह प्रावधान करती है कि यदि राज्य द्वारा कंपनी के लिए भूमि का अधिग्रहण किया जा रहा है, तो इस उद्देश्य के लिए समुचित सरकार की पूर्व सहमति और राज्य तथा कंपनी के बीच एक समझौते का निष्पादन आवश्यक है। निषेध इस प्रभाव का है कि किसी भी कंपनी के लिए भूमि अधिग्रहित करने हेतु धारा 6 से 37 (दोनों सम्मिलित) के प्रावधान तब तक लागू नहीं किए जाएंगे जब तक कि समुचित सरकार की पूर्व सहमति प्राप्त न हो जाए, और न ही तब तक जब तक कंपनी इसके बाद वर्णित समझौते को निष्पादित न कर ले। धारा 5-क के तहत आपत्तियों के परिणाम के निष्कर्ष तक की कार्यवाही राज्य सरकार के सहयोग से जारी रह सकती है, लेकिन धारा 6 से धारा 37 (दोनों सम्मिलित) तक के प्रावधानों का उपयोग किसी कंपनी के लिए भूमि अधिग्रहण हेतु केवल दो शर्तों की संतुष्टि पर ही किया जा सकता है: (i) इस उद्देश्य के लिए समुचित सरकार की पूर्व सहमति, और (ii) कंपनी द्वारा आगामी धाराओं में वर्णित प्रकार के समझौते का निष्पादन किया जाना। धारा 40 यह प्रावधान करती है कि समुचित सरकार की सहमति तब तक उपलब्ध नहीं होगी जब तक कि वह या तो धारा 5-क की उपधारा (2) के तहत समाहर्ता का प्रतिवेदन से संतुष्ट न हो जाए या स्वयं धारा 40 में कल्पित प्रकार की जांच न कर ली जाए। अर्थात्, धारा 5-क की उपधारा (2) के तहत समाहर्ता द्वारा दिया गया प्रतिवेदन और धारा 40 के तहत विचार-विमर्श के परिणामस्वरूप प्राप्त प्रतिवेदन, दोनों ही धारा 39 के तहत सहमति देने के लिए समुचित सरकार द्वारा अपनाए जाने हेतु समान स्तर पर हैं। धारा 40 के तहत कल्पित जांच समुचित सरकार द्वारा नियुक्त एक अधिकारी के माध्यम से, निर्धारित समय और स्थान

पर की जा सकती है ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि कंपनी द्वारा अधिग्रहण के निम्नलिखित तीन उद्देश्यों में से किसे प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है:

(क) कि अधिग्रहण का उद्देश्य कंपनी द्वारा नियोजित श्रमिकों के लिए निवास गृहों के निर्माण हेतु या उससे सीधे जुड़े सुख-साधनों के प्रावधान हेतु भूमि प्राप्त करना है, या

(कक) कि ऐसा अधिग्रहण किसी ऐसी कंपनी के लिए किसी भवन या कार्य के निर्माण हेतु आवश्यक है जो किसी ऐसे उद्योग या कार्य में लगी हुई है या उसमें शामिल होने के लिए कदम उठा रही है जो सार्वजनिक प्रयोजन के लिए है; या

(ख) कि ऐसा अधिग्रहण किसी कार्य के निर्माण के लिए आवश्यक है और यह संभावना है कि ऐसा कार्य जनता के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

अन्वेषण आयोजित करने के लिए नियुक्त अधिकारी को धारा 40 की उपधारा (3) के तहत गवाहों को बुलाने, उनकी उपस्थिति लागू करने और दस्तावेजों को पेश करने के लिए विवश करने की वैसी ही शक्ति प्राप्त है और यथासंभव उसी रीति से है, जैसा कि दीवानी न्यायालय के मामले में दीवानी प्रक्रिया संहिता द्वारा प्रदान किया गया है।

तदुपरांत धारा 41 उल्लेख करती है कि यदि समुचित सरकार, धारा 5-क की उपधारा (2) के तहत समाहर्ता का प्रतिवेदन (यदि कोई हो, क्योंकि त्वरित अधिग्रहण में यह नहीं भी हो सकती है) या धारा 40 के तहत जांच करने वाले अधिकारी की प्रतिवेदन पर विचार करने के बाद संतुष्ट हो जाती है कि प्रस्तावित अधिग्रहण धारा 40 की उपधारा (1) के खंड (क), (कक) या (ख) में संदर्भित किसी भी उद्देश्य के लिए है, तो वह कंपनी से समुचित सरकार के साथ एक समझौता करने की अपेक्षा करेगी, जिसमें समुचित सरकार की संतुष्टि के लिए निम्नलिखित मामलों का प्रावधान होगा, अर्थात्:

(1) समुचित सरकार को अधिग्रहण की लागत का भुगतान;

(2) ऐसे भुगतान पर, कंपनी को भूमि का हस्तांतरण;

(3) वे शर्तें जिन पर कंपनी द्वारा भूमि रखी जाएगी;

(4) जहाँ अधिग्रहण निवास गृहों के निर्माण या उससे जुड़े सुख-साधनों के प्रावधान के उद्देश्य से है, वह समय जिसके भीतर, वह शर्त जिस पर और वह तरीका जिससे निवास गृह या सुख-साधन निर्मित या प्रदान किए जाएंगे;

(4-क) जहाँ अधिग्रहण किसी ऐसी कंपनी के लिए किसी भवन या कार्य के निर्माण हेतु है जो किसी ऐसे उद्योग या कार्य में लगी हुई है या उसमें शामिल होने के

लिए कदम उठा रही है जो सार्वजनिक प्रयोजन के लिए है, वह समय जिसके भीतर और वह शर्त जिस पर भवन या कार्य का निर्माण या निष्पादन किया जाएगा;

(5) जहाँ अधिग्रहण किसी अन्य कार्य के निर्माण के लिए है, वह समय जिसके भीतर और वे शर्तें जिन पर कंपनी उस कार्य का उपयोग करने की हकदार होगी।

इस प्रकार धारा 41 की भाषा से यह स्पष्ट है कि जब तक प्रस्तावित अधिग्रहण धारा 40 के खंड (क), (कक) और (ख) में उल्लिखित तीन प्रकारों में से न हो और उन उद्देश्यों में से किसी एक के लिए आवश्यक न पाया जाए, तब तक न तो नियुक्त अधिकारी (जिसे जांच सौंपी गई है) कंपनी के पक्ष में निर्णय देने के लिए सशक्त है, और न ही सरकार से ऐसी संतुष्टि दर्ज किए बिना सहमति देने की अपेक्षा की जाती है। इसके पश्चात, अधिनियम की धारा 42 के तहत समझौते के निष्पादन के बाद यथाशीघ्र इसे आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित करना आवश्यक है और तदुपरान्त (जहाँ तक उन शर्तों का संबंध है जिनके आधार पर जनता उस कार्य का उपयोग करने की हकदार होगी) इसका वही प्रभाव होगा मानो यह अधिनियम का ही हिस्सा हो। सरकार द्वारा प्रतिवेदन पर विचार करने और उसे स्वीकार करने (सहमति द्वारा सूचित) के दौरान जनता के कार्य के उपयोग का अधिकार व्यापक होता है, जो यह दर्शाता है कि विचार-विमर्श और निर्णय पर सार्वजनिक उपयोगिता का मुख्य उद्देश्य हावी रहता है। धारा 44-क, समुचित सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना, भाग VII के तहत अधिग्रहित किसी भी भूमि को बिक्री, बंधक, उपहार, पट्टे या अन्यथा हस्तांतरित करने पर प्रतिबंध लगाती है। और अंततः, धारा 44-ख एक निजी कंपनी और एक सरकारी कंपनी के बीच अंतर करती है, जिसमें यह प्रावधान है कि इस अधिनियम में किसी भी बात के होने के बावजूद, किसी भी ऐसी निजी कंपनी के लिए जो सरकारी कंपनी नहीं है, धारा 40 की उपधारा (1) के खंड (क) में उल्लिखित उद्देश्य के अलावा इस भाग के तहत कोई भूमि अधिग्रहित नहीं की जाएगी। इसके साथ जोड़े गए स्पष्टीकरण में कहा गया है कि "निजी कंपनी" और "सरकारी कंपनी" का वही अर्थ होगा जो कंपनी अधिनियम, 1956 में उन्हें क्रमशः सौंपा गया है।

अब जब हम कंपनी अधिनियम के प्रावधानों की ओर बढ़ते हैं, तो धारा 2(10) यह प्रावधान करती है कि कंपनी का अर्थ धारा 3 में परिभाषित कंपनी है। धारा 3 'कंपनी' को उस कंपनी के रूप में परिभाषित करती है जो कंपनी अधिनियम के तहत गठित और पंजीकृत है, या उसमें परिभाषित कोई मौजूदा कंपनी है। "निजी कंपनी" को

एक ऐसी कंपनी के रूप में परिभाषित किया गया है जिसके अंतर्नियमों द्वारा अपने शेयरों को स्थानांतरित करने के अधिकार को, यदि कोई हो, प्रतिबंधित किया गया है और सदस्यों की संख्या पचास तक सीमित है (जिसमें कुछ विस्तृत व्यक्तियों को शामिल नहीं किया गया है), और जो जनता को कंपनी के किसी भी शेयर या डिबेंचर को खरीदने के लिए आमंत्रित करने पर रोक लगाती है। इसके विपरीत, "सार्वजनिक कंपनी" का अवशिष्ट अर्थ वह कंपनी है जो निजी कंपनी नहीं है। धारा 2(18) के तहत "सरकारी कंपनी" का अर्थ धारा 617 के अर्थ में सरकारी कंपनी है, जो बदले में कहती है कि सरकारी कंपनी का अर्थ ऐसी किसी भी कंपनी से है जिसमें चुकता शेयर पूंजी का कम से कम 51 प्रतिशत केंद्र सरकार या किसी राज्य सरकार या सरकारों द्वारा, या आंशिक रूप से केंद्र सरकार और आंशिक रूप से एक या अधिक राज्य सरकारों द्वारा धारित हो, और इसमें वह कंपनी शामिल है जो इस प्रकार परिभाषित सरकारी कंपनी की सहायक कंपनी है। इस समझ के आधार पर, जिस समिति के अपीलकर्ता सदस्य हैं, वह कभी भी सरकारी कंपनी नहीं हो सकती क्योंकि किसी भी सरकार ने इसकी शेयर पूंजी में अंशदान नहीं किया है। यह समिति निजी कंपनी भी नहीं हो सकती क्योंकि इसके 50 से अधिक सदस्य हैं (सदस्यों की संख्या 400 बताई गई है)। चूंकि समिति न तो सरकारी कंपनी है और न ही निजी कंपनी, इसलिए एक ही उद्देश्य के लिए निजी कंपनी हेतु अधिग्रहण के विकल्प को सीमित करने वाली धारा 44-ख की बाधा यहाँ लागू नहीं होती। चूंकि समिति एक निजी कंपनी नहीं है, इसलिए अपवर्जन की प्रक्रिया द्वारा यह कंपनी अधिनियम की धारा 3 के तहत एक "सार्वजनिक कंपनी" बन जाती है, भले ही इसका गठन और पंजीकरण उक्त अधिनियम के तहत नहीं हुआ हो, बल्कि केवल भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 3(ङ) में वैधानिक समावेशन के कारण हुआ है, जो राज्य के कानून के तहत पंजीकृत सहकारी समिति को स्पष्ट रूप से एक कंपनी के रूप में मानती है, मानो वह कंपनी अधिनियम के तहत पंजीकृत कंपनी हो। फिर भी, एक सार्वजनिक कंपनी के रूप में समिति को अधिनियम की धारा 40 के तहत जांच में यह संतुष्ट करना आवश्यक होगा कि उसे खंड (क), (कक) और (ख) में उल्लिखित किसी भी उद्देश्य के लिए भूमि की आवश्यकता है, इससे पहले कि वह इसके आधार पर समुचित सरकार की सहमति प्राप्त कर सके और धारा 41 के तहत परिकल्पित समझौता कर सके, ताकि अधिनियम की धारा 6 से धारा 37 तक की भूमिका शुरू की जा सके। धारा 41 के

आलोक में, धारा 40 के तहत परिकल्पित ऐसी अन्वेषण एवं प्रतिवेदन का महत्व दोहरा उद्देश्य पूरा करना है: पहला, यह अधिग्रहण को तब दिशा दे सकता है जब धारा 17 के तहत तात्कालिकता के कारण धारा 5-क को लागू न किया गया हो, और दूसरा, यदि अधिनियम की धारा 5-क के तहत जांच के संचालन में कोई त्रुटि हो, तो एक सुरक्षित विकल्प प्रदान करना है। इसलिए, इनमें से किसी एक को तैयार रखा जाना चाहिए और यदि संयोगवश एक दोषपूर्ण हो, जबकि दोनों अस्तित्व में हों, तो कानून की आवश्यकता को पूरा करने के लिए दूसरे का उपयोग किया जा सकता है।

परंतु कंपनी के लिए यही सब कुछ नहीं है। अधिग्रहण के अनुरोध के साथ सरकार के पास जाने के लिए, कंपनी को 'नियमों' के प्रावधानों को भी संतुष्ट करना होता है। नियम 4 के अनुसार:-

> "4. अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू करने से पहले कुछ मामलों के संबंध में समुचित सरकार का संतुष्ट होना: - (1) जब भी कोई कंपनी किसी भूमि के अधिग्रहण के लिए समुचित सरकार को आवेदन करती है, तो वह सरकार समाहर्ता को निम्नलिखित मामलों पर उसे एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करने का निर्देश देगी, अर्थात् -
>
> (i) कि कंपनी ने अधिग्रहण के उद्देश्य के लिए उपयुक्त भूमि खोजने हेतु इलाके में अपना सर्वोत्तम प्रयास किया है;
>
> (ii) कि कंपनी ने उचित मूल्य के भुगतान पर उसमें रुचि रखने वाले व्यक्तियों के साथ बातचीत के माध्यम से ऐसी भूमि प्राप्त करने के सभी उचित प्रयास किए हैं और ऐसे प्रयास विफल रहे हैं;
>
> (iii) कि अधिग्रहित की जाने वाली प्रस्तावित भूमि उस उद्देश्य के लिए उपयुक्त है;
>
> (iv) कि अधिग्रहित की जाने वाली प्रस्तावित भूमि का क्षेत्रफल अत्यधिक नहीं है;
>
> (v) कि कंपनी भूमि का शीघ्रता से उपयोग करने की स्थिति में है; और
>
> (vi) जहाँ अधिग्रहित की जाने वाली प्रस्तावित भूमि अच्छी कृषि भूमि है, वहाँ कोई वैकल्पिक उपयुक्त स्थल नहीं खोजा जा सकता है ताकि उस भूमि के अधिग्रहण से बचा जा सके।

(2) समाहर्ता, कंपनी को इस संबंध में कोई अभ्यावेदन देने का उचित अवसर देने के बाद, उप-नियम (1) में संदर्भित मामलों की जांच करेगा और ऐसी जांच करते समय वह -

(i) किसी भी ऐसे मामले में जहाँ अधिग्रहित की जाने वाली प्रस्तावित भूमि कृषि भूमि है, जिले के वरिष्ठ कृषि अधिकारी से परामर्श करेगा कि ऐसी भूमि अच्छी कृषि भूमि है या नहीं;

(ii) अधिनियम की धारा 23 और 24 के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, उस भूमि के संबंध में देय मुआवजे की अनुमानित राशि निर्धारित करेगा, जो समाहर्ता की राय में, कंपनी के लिए अधिग्रहित की जानी चाहिए; और

(iii) यह सुनिश्चित करेगा कि क्या कंपनी ने अधिग्रहित की जाने वाली प्रस्तावित भूमि में रुचि रखने वाले व्यक्तियों को उचित मूल्य (जो इस प्रकार निर्धारित मुआवजे से कम न हो) की पेशकश की थी।

स्पष्टीकरण - इस नियम के प्रयोजन के लिए "अच्छी कृषि भूमि" का अर्थ ऐसी किसी भी भूमि से है, जो उस क्षेत्र के कृषि उत्पादन के स्तर और शीर्ष स्वरूप को देखते हुए, जिसमें वह स्थित है, औसत या औसत से अधिक उत्पादकता वाली है और इसमें कोई उद्यान या निकुंज भूमि शामिल है।

(3) उप-नियम (2) के तहत जांच करने के बाद यथाशीघ्र, समाहर्ता समुचित सरकार को एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगा और उसकी एक प्रति सरकार द्वारा समिति को भेजी जाएगी।

(4) समुचित सरकार द्वारा अधिनियम की धारा 6 के तहत तब तक कोई घोषणा नहीं की जाएगी जब तक कि-

(i) समुचित सरकार ने उस समिति से परामर्श न कर लिया हो और इस नियम के तहत प्रस्तुत प्रतिवेदन तथा अधिनियम की धारा 5-क के तहत प्रस्तुत प्रतिवेदन पर विचार न कर लिया हो; और

(ii) कंपनी द्वारा अधिनियम की धारा 41 के तहत समझौता निष्पादित न कर दिया गया हो।

नियम 3 के तहत, अधिनियम के भाग VII के अंतर्गत भूमि के अधिग्रहण के संबंध में समुचित सरकार को सलाह देने के उद्देश्य से एक भूमि अधिग्रहण समिति का गठन किया जाता है, जिसे अपने गठन की तारीख से एक महीने के भीतर अपनी सलाह देना आवश्यक है, हालांकि इस समय को दो महीने तक बढ़ाया जा सकता है। यहाँ फिर से समाहर्ता को अर्ध-न्यायिक अर्थ में एक जांच आयोजित करना आवश्यक है और वह न केवल कंपनी को उस संबंध में अपने अभ्यावेदन को पुष्ट करने का उचित अवसर देगा, बल्कि नैसर्गिक न्याय के नियमों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, भूमि स्वामियों को भी कम से कम मूल्य की बातचीत जैसे मामलों और अन्य संबंधित मामलों पर कंपनी के पक्ष का खंडन करने का पर्याप्त अवसर देगा। नियम 4 अनिवार्य है और इसका अनुपालन किया जाना आवश्यक है, यह इस न्यायालय द्वारा विभिन्न निर्णयों में निर्धारित किया गया है। उनमें से कुछ का संदर्भ लिया जा सकता है: *गुजरात राज्य एवं एक अन्य बनाम पटेल चतुरभाई नरसीभाई एवं अन्य* [1975] 1 एससीसी 583; *गुजरात राज्य एंड अदर्स बनाम अंबालाल हैदरभाई एवं अन्य,* [1976] 3 एससीसी 495 (499) और *सामान्य सरकारी कर्मचारी सहकारी आवास समिति लिमिटेड एवं एक अन्य बनाम शे. वहाब उद्दीन एवं अन्य,* [1981] 2 एससीसी 352।

हालांकि, उच्च न्यायालय ने तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर यह माना है कि राज्य सरकार द्वारा नियम 4 के उप-नियम (2) के तहत जांच की कोई भी प्रतिवेदन भूमि अधिग्रहण समिति को नहीं भेजी गई थी और सरकार ने कानून के आदेश का उल्लंघन करते हुए अधिग्रहण के लिए अपनी सहमति दे दी। उच्च न्यायालय ने आगे यह भी कहा है कि राज्य सरकार की सहमति ने नियम 4 के उप-नियम (3) का उल्लंघन किया है। अधिनियम की धारा 40 के पहलू पर, उच्च न्यायालय ने यहाँ तक माना कि विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाकर्ताओं को उचित जांच के माध्यम से कंपनी की जरूरतों का खंडन करने का अवसर नहीं दिया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायालय का स्वाभाविक विचार यह था कि सरकार तब तक सहमति देने के लिए आगे नहीं बढ़ती जब तक कि वह प्रस्तावित जांच में यह निष्कर्ष प्राप्त न कर ले कि अधिग्रहण का उद्देश्य धारा 40 में उल्लिखित उद्देश्यों में से एक था। और अंततः, उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि धारा 5-क के तहत की गई जांच दूषित थी क्योंकि कानून के अनुसार आवश्यक अधिसूचना के व्यक्तिगत सूचना इच्छुक व्यक्तियों को नहीं भेजे गए थे;

जिन्हें ऐसे प्रतिवेदन मिले थे और जिन्होंने आपत्ति दर्ज की थी, उन्हें सुनवाई का उचित अवसर नहीं दिया गया था; मंगाई गई आपत्तियों की फाइल से प्रक्रिया का लापरवाही से पालन होना प्रकट हुआ; आपत्ति कर्ताओं को अधिकारी के समक्ष सामग्री रखने का उचित अवसर नहीं दिया गया और जब अधिकारी ने स्वयं स्थल निरीक्षण का प्रतिवेदन प्राप्त की थी, तो उसने आपत्ति कर्ताओं को उस पर अपनी धारणाओं को स्पष्ट करने का अवसर नहीं दिया। इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने फाइल में कुछ हेरफेर होने का संदेह भी व्यक्त किया। इन्हीं कारणों से प्रेरित होकर, उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 5-क के तहत जांच के दूषित होने और नियम 4 के अनिवार्य प्रावधान के उल्लंघन तथा भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 6 के प्रयोग से पूर्व एक अनिवार्य शर्त के रूप में इसके अनुपालन के आधार पर मामले को वापस भेजने का निर्णय लिया।

यह तस्वीर तब तक पूरी नहीं होगी जब तक कि अपीलकर्ताओं के उस निर्विवाद तर्क पर ध्यान न दिया जाए कि 4 मार्च 1983 को धारा 41 के तहत समझौते पर हस्ताक्षर और प्रकाशन के बाद, तथा 18 मार्च 1983 को धारा 6 के तहत घोषणा जारी होने के बाद, जनवरी 1984 तक 89,28,663 रुपये का एक पंचाट तैयार किया गया था, जिसे समिति द्वारा जनवरी 1984 तक सरकार के पास जमा कर दिया गया था। समिति का दावा है कि 2.8.84 को उसे भूमि का कब्जा दे दिया गया था और कई प्लॉट उचित पंजीकृत दस्तावेजों के माध्यम से उसके सदस्यों के बीच वितरित किए जा चुके थे। बाद वाले पहलू पर, तथ्यों का विवाद था। विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाकर्ता (जो स्वयं भी कुछ सहकारी गृह निर्माण समितियाँ थे), मूल भूमि मालिक और भूमि के अंतरिती यह दावा करते रहे थे कि कब्जा उन्हीं के पास था, और उनमें से कुछ ने भवन निर्माण करने या निर्माण की प्रक्रिया में होने का दावा किया था। उच्च न्यायालय ने अंतरिम उपाय के रूप में यथास्थिति बनाए रखने का आदेश दिया था। उच्च न्यायालय ने अपने अंतिम फैसले में यह प्रश्न उठाया कि किस सहकारी समिति का वर्चस्व हो सकता है, क्योंकि दोनों तरफ सहकारी समितियाँ एक-दूसरे के खिलाफ थीं, दोनों का घोषित उद्देश्य आवास था, और किसे प्राथमिकता दी जानी चाहिए, यह एक उलझाने वाला प्रश्न था। पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं ने कानून पर अपने संबंधित दृष्टिकोण रखने के अलावा, हमें धारा 40 और/या नियमों के नियम 4 की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कथित रूप से आयोजित जांच के दस्तावेजों के साथ-साथ सरकारी कार्रवाई के पक्ष और विपक्ष में

अधिनियम की धारा 5-क के तहत कार्यवाही के दस्तावेज दिखाने का प्रयास किया। सामान्य तथ्यों की कई परतों पर (व्यक्तिगत तथ्यों को छोड़कर), उच्च न्यायालय ने मामले को वापस भेजने के लिए एक सामान्य मार्ग अपनाया। इन परिस्थितियों में, हमें लगता है कि यह एक संभावित दृष्टिकोण था जो उच्च न्यायालय अपना सकता था, लेकिन इस दृष्टिकोण ने विवाद के निपटारे को दृष्टि से ओझल कर दिया। यहाँ उच्च न्यायालय ने कम से कम रिमांड की शर्तों को सीमित न करके गलती की है। जो व्यक्ति विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाओं में उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं गए थे, उन्हें राहत देने की आवश्यकता नहीं थी। रिमांड केवल उन लोगों के हितों तक सीमित होना चाहिए था जो उच्च न्यायालय के समक्ष आपत्ति करने वाले विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाकर्ता थे। रिमांड इतना व्यापक नहीं होना चाहिए था जैसा कि यह है। धारा 6 के तहत घोषणा को विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाकर्ताओं की भूमि के अलावा अन्य भूमि के संबंध में बरकरार रखने की अनुमति दी जानी चाहिए थी, और जहाँ तक विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाओं का संबंध है, उनके मामलों को दोनों पहलुओं पर व्यक्तिगत रूप से उच्च न्यायालय द्वारा स्वयं देखा जाना चाहिए था। और प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने में यदि कोई देरी हुई थी, तो उसका निर्णयात्मक प्रभाव हो सकता था।

अधिसूचना में तुरंत धारा 4 के तहत इस आशय की शब्दावली का प्रयोग किया गया है कि सरकार द्वारा सार्वजनिक उद्देश्य के लिए, अर्थात बिहार वित्त सेवा गृह निर्माण सहकारी समिति के लिए, समिति की लागत पर भूमि का अधिग्रहण किया जाना आवश्यक है। यद्यपि ऊपर उद्धृत धारा 4 में समुचित सरकार से यह अपेक्षा की गई है कि वह भूमि अधिग्रहित करने के अपने इरादे को अधिसूचित करे जिसकी किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए आवश्यकता है या आवश्यकता होने की संभावना है, लेकिन यह धारा उस चरण में कहीं भी यह निर्दिष्ट करना अनिवार्य नहीं बनाती है कि सार्वजनिक उद्देश्य सरकार की किसी गतिविधि द्वारा प्राप्त किया जाएगा या इसे किसी कंपनी को सौंप दिया जाएगा। अब यहाँ सरकार का इरादा, जैसा कि व्यक्त किया गया है, समिति को उसके घोषित उद्देश्यों के लिए समिति की लागत पर भूमि प्रदान करके सार्वजनिक उद्देश्य को प्राप्त करना था। धारा 5-क के तहत आपत्ति करने वाले इच्छुक व्यक्तियों को अधिग्रहण की प्रकृति के प्रति अवगत करा दिया गया था। अंततः धारा 6 की अधिसूचना जारी करते

समय, उसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि अधिग्रहित करने की घोषणा की गई थी। यह घोषणा धारा 6 की उपधारा (1) के अनुरूप थी, जो बिहार में प्रतिस्थापित रूप में लागू है और जो इस प्रकार है:-

> "(1) अधिनियम के भाग VII के प्रावधानों के अधीन, जहाँ समुचित सरकार धारा 5-क की उपधारा (2) के परंतुक के तहत समाहर्ता का प्रतिवेदन पर विचार करने के बाद संतुष्ट है, या समाहर्ता धारा 5-क के तहत आपत्तियों को सुनने के बाद संतुष्ट है कि किसी विशेष भूमि की आवश्यकता किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए या कंपनी के लिए है, तो यथास्थिति, समुचित सरकार या समाहर्ता द्वारा उस आशय की एक लिखित घोषणा की जाएगी:
>
> परंतु यह कि ऐसी कोई घोषणा तब तक नहीं की जाएगी जब तक कि ऐसी संपत्ति के लिए दिया जाने वाला मुआवजा कंपनी द्वारा या पूर्णतः या आंशिक रूप से राज्य की संचित निधि या किसी स्थानीय प्राधिकरण द्वारा नियंत्रित या प्रबंधित किसी निधि से भुगतान न किया जाना हो।"

अब यहाँ 'सार्वजनिक उद्देश्य' और 'कंपनी के लिए उद्देश्य' के बीच अंतर स्पष्ट किया गया है। किसी कंपनी के लिए भूमि का अधिग्रहण मूलतः एक सार्वजनिक उद्देश्य ही है, क्योंकि धारा 40 में उल्लिखित वे सभी गतिविधियाँ, जैसे कि कर्मचारियों के लिए निवास गृहों का निर्माण और सुविधाएं प्रदान करना तथा सार्वजनिक उपयोगिता के किसी कार्य का निर्माण आदि, सार्वजनिक उद्देश्य की ही पूर्ति करती हैं। कंपनी के लिए अधिग्रहण और उसके उद्देश्य की जांच धारा 5-क या धारा 40 के तहत की जा सकती है, जो अनिवार्य रूप से धारा 4 के तहत अधिसूचना के बाद ही होती है। इस संदर्भ में *बाबू बरक्या ठाकुर बनाम बॉम्बे राज्य (अब महाराष्ट्र) एवं अन्य,* एआईआर (1960) एससी 1203 का उपयोगी संदर्भ लिया जा सकता है। उच्च न्यायालय के समक्ष यह स्वीकृत मामला था कि अधिनियम की धारा 40 के प्रावधानों को शामिल किए और उनका अनुपालन किए बिना उत्तरदाता-समिति के लिए कोई अधिग्रहण नहीं हो सकता था। उपरोक्त *बाबू बरक्या* के मामले में भी, इस न्यायालय ने यह विचार अपनाया है कि जैसा कि धारा 39 में प्रावधान है, भूमि अधिग्रहण अधिनियम की मशीनरी (जो धारा 6 से शुरू होकर धारा 37 पर समाप्त होती है) तब तक परिचालन में नहीं लाई जाएगी जब तक कि

दो पूर्व शर्तें पूरी न हो जाएं, अर्थात्, (i) समुचित सरकार की पूर्व सहमति प्राप्त कर ली गई हो और (ii) कंपनी द्वारा धारा 41 की शर्तों के अनुसार एक समझौता निष्पादित किया गया हो। ऐसी सहमति तब दी जा सकती है जब सरकार धारा 5-क (2) द्वारा परिकल्पित अन्वेषण का प्रतिवेदन या धारा 40 के तहत ही आयोजित जांच के आधार पर संतुष्ट हो कि अधिग्रहण का उद्देश्य धारा 40 में परिकल्पित उद्देश्यों के लिए है। कानून की इस स्थिति में, अपीलकर्ताओं की ओर से दिया गया यह तर्क कि जब उनकी समिति को न तो निजी और न ही सरकारी कंपनी माना जा सकता था, तो वह कोई कंपनी थी ही नहीं जिससे वह अधिनियम के अध्याय VII का पालन करने के लिए बाध्य रहे, निराधार है। एक कंपनी के रूप में समिति अपने आवश्यक अधिग्रहण को बढ़ावा देने के लिए अधिनियम की धारा 6 से 37 की सहायता लेने से पहले धारा 40 की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बाध्य है।

इस प्रकार इस क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले कानून को स्पष्ट करने के बाद; हम संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा शक्ति के प्रयोग में समता और विवेक की धाराओं के प्रवेश के लिए द्वार खोलेंगे। जैसा कि पहले कहा गया है, हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय को अधिनियम की धारा 6 के तहत अधिसूचना को समग्र रूप से रद्द नहीं करना चाहिए था, बल्कि उसे अपने समक्ष प्रत्येक विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाकर्ता के संबंध में व्यक्तिगत न्याय करना चाहिए था। इसमें प्रत्येक मामले में परस्पर प्रभावी समता और अपने विवेक के नियमन को ध्यान में रखना चाहिए था, साथ ही उन अन्य कारकों के समूह को भी देखना चाहिए था जो प्रक्रियागत अवैधताओं के स्पष्ट होने के बावजूद राहत देने, न देने या उसमें बदलाव करने के लिए उच्च न्यायालय को प्रभावित करते हैं। अतः पूर्व-व्यक्त विचार के आधार पर, हम इन अपीलों को स्वीकार करते हैं, उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेशों को अपास्त करते हैं और इन सभी मामलों को वापस उसे इस अनुरोध के साथ भेजते हैं कि यद्यपि वह इन्हें एक बैच के रूप में ले सकता है, लेकिन वह प्रत्येक मामले पर व्यक्तिगत ध्यान दे, विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाकर्ता द्वारा बताई गई अवैधताओं को समय के कारक को ध्यान में रखते हुए सही परिप्रेक्ष्य में देखे और यदि कोई राहत बनती है, तो उसे व्यक्तिगत रूप से उस तक ही सीमित रखे। यह न समझा जाए कि हमने व्यक्तिगत न्याय प्रदान करने में उच्च न्यायालय के विवेक को नियंत्रित किया है और वह अन्य बातों के अलावा, समिति और

राज्य सरकार के साथ-साथ विनिर्दिष्ट आदेश याचिकाकर्ताओं के सहयोग से एक न्यायसंगत समाधान की संभावना की जांच कर सकता है, ताकि कानून की सख्ती और न्यायालय का विवेक असहनीय रूप से चोट न पहुँचाए। इस प्रकार हम लागत के संबंध में बिना किसी आदेश के मामलों को उच्च न्यायालय को वापस भेजते हैं।

एस.पी.एस अपीलें स्वीकार की गईं।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।